प्रथम अध्याय

जैनेंद्रकुमार : व्यक्तित्व और कृतित्व

प्रथम अध्याय

जैनेंद्रकुमार : व्यक्तित्व और कृतित्व --

जैनेंद्रकुमारजी का व्यक्तित्व इनके कृतित्व से अलग नहीं किया जाता। ये हिंदी साहित्य के लब्ध प्रतिष्ठित मनोवैज्ञानिक उपन्यासकार थे। साहित्यिक और विचारक के रूप में भी इनका स्थान मान्य था। जैनेंद्रजीका व्यक्तित्व न केवल वैचारिक धरातल पर विद्रोही था / वे देश की स्वाधीनता के लिए आतंकवादी दल के सदस्य भी रहे थे और जीवनकी यातनाओं और यंत्रणाओं को भी झेल चुके थे। आतंकवादी दल की रोमांचकारी घटनाओं तथा पदाधिकारियों के अत्याचारोंने जैनेंद्रजी के व्यक्तित्व को उभारा तथा निखारा था। जीवनकी अनुभूतियों ने इनके चरित्र को दृढ बनाया था और संकल्प को गहनतम कर दिया था।

प्रेमचंद संस्थानसे अलग-अलग हटकर हिंदी में मनोवैज्ञानिक दार्शनिक और विद्रोही साहित्यकारके रूपमें लिखने की प्रवृत्ति जैनेंद्रजीने निर्माण की आश्रमका दैनिक जीवन परंपराने उन्हे भौतिक जगतसे ऊपर उठकर कुछ बल देने का प्रयास किया। गुरुदेव ठाकुर, उपन्यास सम्राट प्रेमचंद, राष्ट्र कवि मैथिलीशरण गुप्त, महाकवि जयशंकर प्रसाद, महात्मा गांधीजी आदि महापुरुषों के व्यक्तित्वों का समुचित असर उनके जीवन के प्रणालीमें देखा जा सकता है।

(१) बचपन --

जैनेंद्रजीका जन्म उत्तरप्रदेश के अलीगढ जिले के कौडियागंजमें २ जनवरी १९०५ ई. में हुआ था। उनका मूलनाम आनंदीलाल लेकिन अधिक समयतक नही रहा।

जन्म के छे वर्ष पश्चात मामा महात्मा भगवान दीनके आश्रम में प्रविष्ट होनेपर उनका नाम " जैनेंद्रकुमार " में परिवर्तित हुआ । सन १९०७ इ. में पिताजी की मृत्यु हुअी । तबसे जैनेंद्रकुमार पंद्रह वर्षतक/पास रहे । माताजी श्रीमती रामदेवीबाई बहुतही उद्यमी और गृहकार्य कुशल गृहिणी थी ।

जैनेंद्रकुमार की दो बडी बहने हैं । सबसे बडी बहन जीवन पर्यन्त अविवाहित रही । वे जैनेंद्र को बहुत प्यार करती थी । अपने बचपन के विषय में जैनेंद्रकुमार का कथन हैं " शुरु से जैनेंद्र में इरादे की ताकत की कमी देखी जा सकती थी । वह किस्मत बनानेवालों में न था अपितु किस्मत ही उसे बनाती चली गई । एक भटके निरीह बालक की तरह उसके छुटपन के दिन गुजरे । वह भौंचक्का सा सब और देखता और कभी अपने साथियों के बीच रहता था और साथी सिर्फ उसे गवारा करते थे । अपने पन का और अपनी जगह का उसे पता न था । क्लास में या किसी सब्जेक्ट में किसी साल पहले नंबर पर आ गया तो दूसरे किसी में एकदम पिछड गया । ताज्जुब हैं कि फेल वे किसी दर्जे में नही हुए । पर पास होता गया तो अपने बावजूद सदा वह एक खोये और भूले हुए ढंग में रहता था । दुनिया उसे बाहर और अंदर चारो तरफ चक्कर में तैरती हुअी मालुम होती थी / जिससे कुछ समज की पकड में नहीं आता था । घूमफिर कर एक ही सच्चाई उसके लिए रह आती थी वह सच्चाई थी उसकी माँ ।"[१]

(२) विवाह तथा परिवार --

बचपनमे ही जैनेंद्रकुमार कुशाग्र बुध्दि और चिंतनशील थे । जैनेंद्रजी का विवाह सन १९२९ इ. में हुआ था । उनका विवाह आदर्श पध्दति पर हुआ था । माता और मामा के विचारोने इनके संस्कारोंकी सर्वाधिक प्रबल बनाने के प्रयास

१ 'डॉ.बलराज सिंहराणा' - 'उपन्यासकार जैनेंद्र के पात्रों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन' (पृ. ४५)
प्रकाशक - संजय प्रकाशक,
संस्करण - प्रथम १९७८

किये । सन १९३२ इ. मे भगवतीदेवी के साथ उनका विवाह हुआ । विवाह राष्ट्रीय भावनासे हुआ । केवल १७५० रुपये खर्च हुये । नये कपडे भी नहीं बनाये । भगवतीदेवी अशिक्षित थी । ' श्रीमती भगवतीदेवी यदि मामूली भी पढ़ीलिखी नही थी, तो यह उनेक भाग्यकी दृष्टिसे वरदान ही सिध्द हुआ हैं । उनकी जैसी सब परिस्थितियोंमें निर्वाह कर सकनेवाली और हर तरहका श्रम और कष्ट सह सकनेवाली पत्नी शायद दूसरी नहीं हो सकती थी । '[१]

पत्नी हमेशा उनके अनुकूल रही । जैनेंद्रजी की पत्नी सहनशीला, आदर्श गृहणी थी । हर परिस्थिती में संतुष्ट रहना और शिकायत की बात मुँहपर न लाना इनके गुण थे । जैनेंद्रजी के साथ इन्होंने भी सामाजिक कार्यों में सब बढ-चढ कर भाग लिया । परिवार के खर्च के लिये निश्चित आयके लिये [redacted] अभाव में इन्होंने कुशलता के साथ परिवार के पालन-पोषण का दायित्व निभाया हैं । इनकी कार्यकुशलता और त्याग-भावनाने साहित्यकार जैनेंद्रकुमार को हमेशा प्रेरित किया ।

जैनेंद्रजी के परिवार में दो पुत्र एवं तीन पुत्रियाँ थे । कुसुम, कुमुद और कनक नामक संपन्न घरानोमें ब्याही हैं । इनके दो पुत्र दिलीप और प्रदीप सुशिक्षित और सुशील हैं । इनके बडे पुत्र दिलीप की असामायिक मृत्यु हो गयी । इनके छोटे पुत्र प्रदीप ' पूर्वोदय ' प्रकाशन नामक संस्था का संचालन कर रहे हैं । जैनेंद्रजीके माताजी का देहावसान सन १९३५ इ. में हुआ ।

(३) <u>शिक्षा</u> --

जैनेंद्रजी की शिक्षा का प्रारंभ ' आश्रम ' से हुआ । डॉ. विजय कुलश्रेष्ठ लिखते हैं कि ' जैनेंद्र पढने लिखने में बहुत तेज तो नहीं पर शिथिल भी नहीं थे । तीसरी कक्षा में कम वय के छात्र होने के कारण प्रथम होते हुए भी चतुर्थ

---

१ 'डॉ. शकुंतला शर्मा' - 'जैनेंद्र की कहानियां एक मूल्यांकन' - पृ. ४३
प्रथम संस्करण - १९७८, प्रकाशक - अभिनव
प्रकाशन, २१-ए, दरियागंज, नई दिल्ली-२

कक्षा में प्रवेश नहीं मिल सका था । बुध्दि की प्रखरता तो उनमें भी लेकिन लापरवाही उससे भी अधिक थे झेंपू और शर्मीले भी थे ।`[१] सन १९११ ई. मे उन्होंने मैट्रिक परीक्षा पास की । दो वर्षतक काशी विश्वविद्यालय में अध्ययन करने के उपरांत असहयोग आंदोलन के कारण अपने-आपको झाकझोर दिया । परिणाम स्वरुप सन १९३० इ. और सन १९३२ इ. में जेल की यात्रा करनी पडी ।

(४) जीवन संघर्ष --

असहयोग आंदोलनसे प्रभावित होकर जैनेंद्रकुमार राजनैतिक क्षेत्र में रुचि लेने लगे । सन १९३० इ.में दिल्ली के विशाल जुलसमें जब पुलिस की लाठीकी मार उन्होंने खायी । तबसे उन्होंने राजनिति में भाग नही लिया । नौंकरी जैनेंद्रजीने कभी नहीं की । वे अपने आपको निरंतर बेकार समझाते थे । उन्होंने फर्निचरकी साझाकी दूकान भी शुरु की थी । लेकिन उसमें असफल रहे । नौंकरी के लिए वे बंबई, कलकत्ता तक यात्रा कर चुके थे ।` कभी कभी मानसिक तनावकी स्थितिमें जैनेंद्रजी आत्महत्या का विचार करते थे । लेकिन वृध्द माँ का विचार आते ही वे अपनी दुरावस्था को झेलते हुए जिवित रहे ` जीवन में उन्होंने मर्यादाका पालन किया । निरंतर वे अध्ययनशील रहे । जैनेंद्र कम हँसते थे । लेकिन जब हँसते थे, तब गहराई और निश्छलतासे हँसते थे । अपने लेखन कार्य की शुरुआत को व्यक्त करते हुए वे बताते हैं --` लिखना पढना हुआ नहीं । इकलौता लडका था, नही कहीं नौंकरी मिली । इसलिए २२-२३ वर्ष में लिखना आरंभ कर दिया ।`[२]

---

१ `डॉ. विजय कुलश्रेष्ठ` - `जैनेंद्र उपन्यास और कला` - पृ. २-३
प्रकाशक - पंचशील प्रकाशन, फिल्म कालोनी, जयपुर-३, संस्करण - १९७८

२ `डॉ. शकुंतला शर्मा` - `जैनेंद्र की कहानियाँ एक मूल्यांकन` - पृ. ४४
अभिनव प्रकाशन, नई दिल्ली-२, प्रथम संस्करण -१९७८

(५) साहित्यिक विधा की ओर --

नौकरी पानेमें असफल रहने पर जैनेंद्रजीने पुस्तकालय का आश्रय लिया। यथासंभव पुस्तकों का सदुपयोग उन्होंने किया। इसी में ही लिखने की प्रेरणा जागृत हुआ। श्रीमती सुभद्राकुमारी चौंहान, पंडित माखनलाल चतुर्वेदी आदि विद्वानों से उनकी भेंट हुआ। कहानियों के प्रति वे पहलेसे ही झुके थे। आचार्य चतुरसेन शास्त्रीजी के 'अंतस्थल' गद्य काव्यसे प्रभावित होकर इन्होंने सर्व प्रथम 'देश जाग उठा' लिखा। 'खेल' कहानी प्रकाशित होनेपर स्वर्गीय राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्तजीने उनके संबंध में कहा था हमे हिंदी में रविबाबू और शरत्बाबू अब मिले और एक साथ मिले। जैनेंद्रकुमार की लेखनी साहित्यकी सीमित परिधिमें ही उलझाती हुआ नही रही। सन १९२९ ई. में उनका पहला उपन्यास 'परख' सामने आया। अकादमी पुरस्कार मिला। युगीन परिस्थितीयों के परिप्रेक्ष्यमें वह अपने आपमें अनूठा था। आगेचल आपने अन्य ग्यारह उपन्यास मनोवैज्ञानिक उपन्यासोंकी निर्मिती की। वे उपन्यास इस प्रकार --

तपोभूमि	- प्रकाशन - १९३२
सुनीता	- प्रकाशन - १९३५ रचना - १९३४
त्यागपत्र	- प्रकाशन - १९३७ रचना - १९३६
कल्याणी	- प्रकाशन - १९३९ रचना - १९३८
सुखदा	- प्रकाशन - १९५२
विवर्त	- प्रकाशन - १९५२
व्यतीत	- प्रकाशन - १९५३
अनामस्वामी	- प्रकाशन - १९७४
जयवर्धन	- प्रकाशन -
दशार्क	- प्रकाशन - १९८५
मुक्तिबोध	-

कहानियाँ भी सात संग्रहोंमें निकली हैं । `फाँसी`, `वातायन`, `नीलमदेश की राजकन्या`, `एकरात`, `दो चिड़ियाँ`, `पाजेब`, `जयसंधि` ।

<u>निबंध संग्रह --</u>

(१) जैनेंद्र के विचार - सं.प्रभाकर माचवे - १९३४ ।

(२) प्रस्तुत प्रश्न सन-१९३६ ।

(३) जड़ की बात सन-१९४५ ।

(४) पूर्वोदय सन-१९५१ ।

(५) साहित्य का श्रेय और प्रेम सन-१९५३ ।

(६) मंथन सन-१९५३ ।

(७) सोचविचार सन-१९५३ ।

(८) काम,प्रेम और परिवार सन-१९५३ ।

(९) ये और वे सन-१९५४ ।

(१०) साहित्यचयन सन-१९५२ ।

(११) विचार वल्लरी सन-१९५२ ।

<u>अनुवाद --</u>

(१) मन्दालिनी (नाटक) मूल लेखक मेटरलिंक अनुवाद सन १९२७ में और प्रकाशन १९३५ में हुआ ।

(२) प्रेम में भगवान कहानियाँ मूल लेखक - टॉलस्टाय प्रकाशन १९३७ ।

(३) पाप और प्रकाश (नाटक) मूल लेखक - टॉलस्टाय अनुवाद १९३७ में और प्रकाशन १९३५ में ।

(४) अलेक्जेन्डर कुप्रिन के `मामा द पिट` के अनुवाद की योजना थी । लेकिन उनका देहावसान हो गया ।

जैनेंद्रकुमार कहानीकार नामसे प्रसिध्द हो चुके, लेकिन उनका प्रौढ़ निबंधकार, तत्वचिंतक और विचारवंत दिखाई देते थे । जैनेंद्रपर 'टॉलस्टाय' का ज्यादा प्रभाव पड़ा वह उनके प्यारे लेखक भी थे । उनका सादा रहना और उच्च विचार यही सूत्र उन्होंने अपने जीवन में लाया था ।

जैनेंद्रजी को अनेकों-ख्यात पुरस्कार भी प्राप्त हुए हैं -- जिनमें मुख्य हैं - इंडियन अकादमी, इलाहाबाद (परख १९२९), भारत सरकार, शिक्षा मंत्रालय, प्रेम में भगवान (१९५२) ,साहित्य अकादमी, (मुक्तिबोध) १९६५, उत्तर प्रसाद पुरस्कार, हस्तीमल डालमिया पुरस्कार उत्तर प्रदेश राज्य सरकार (समय और हम १९७०), पद्मभूषण (भारत सरकार १९७१),मानद डी. लिट्., आगरा विश्वविद्यालय,१९७३ , साहित्य वाचस्पति (उपाधि), हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, १९७३, विद्यावाचस्पति (उपाधि गुरुकुल कांगडी) ,साहित्य अकादमी की फेलोशिप १९७४, एक लाख रुपये का अणुव्रत पुरस्कार १९७८, उत्तरप्रदेश सरकार का एक लाख रुपये का 'भारत भारती' पुरस्कार १९८५ आदि ।

(६) विश्रांतिकाल --

साहित्यिक जीवनी दृष्टिसे जैनेंद्रकुमारका सन १९३९ से सन १९५२ तक का काल विश्रांतिकाल माना जायेगा । जैनेंद्रजीका मानस अभी 'धन और श्रम' परही विचार करने लगा था । पारिवारिक क्षेत्र में 'धन' का अभाव उन्हे हमेशा रहा था । जिससे उनका मानसिक अंतर्द्वन्द निरंतर बढता रहा । बल्कि इस समय भी उनका अध्ययन और मननशीलताकी धारणा बराबर रही । आगे चलकर उनके साहित्य में जो व्यापक अनुभूति की प्रामाणिकता प्राप्त हो गयी, उसके सजाने का कार्य जैनेंद्रजीने इसी समय किया था । सन १९५१ में पुत्र के सहयोगसे 'पूर्वोदय प्रकाशक' की स्थापना की । आजतक का जैनेंद्रजीका समग्र साहित्य लेखन साहित्य 'पूर्वोदय प्रकाशन' से ही प्रकाशित किया गया ।

(७) सफल वक्ता --

प्रारंभिक काल में लेखनसे छुटकारा पानेपर जैनेंद्रजी निष्क्रिय नहीं रहे। विभिन्न सभाओं में और गोष्ठियों में मौलिक विचारोंका अभिव्यक्त करने के लिए उनको आमंत्रित किया गया था। विभिन्न स्थानोंपर विशाल सभाओंसें उन्होंने अपने मौलिक विचारोंको प्रगट किया और यह प्रमाणित किया है कि वे हिंदी की सीमाओंसे बंधे नही हैं। जैन समाज में उनकी प्रतिष्ठा की धाक जम गयी|और ~~प्रतीत हुआ~~। एक बाद में धार्मिक नेता का स्थान लेने लगे। उनके वक्ताकी मौलिकता और प्रखरता उनके सृजनमें भी परिलक्षित हुआ थी। उनके विचार की मौलिकता कभी-कभी नैतिकता की दृष्टिसे अवांछनीय मानी जाती थी। लेकिन उनका चरित्र अत्यंत प्रखर ऊँचा, अहंकारहीन एवं अति आत्मीय था।

(८) साहित्यिक व्यक्तित्व --

जैनेंद्रकुमार की साहित्यिक अनुभूति गहरी थी। जो उन्होंने कहा और लिखा हैं वह स्पष्ट और व्यापक हैं। दुर्बलों के लिए उनकी संवेदनामें आत्मीयता और सहानुभूति थी। आप अपनी ही तरह सबके प्रति ईमानदार थे। पारिवारिक घात-प्रतिघातोंसे पीडित होनेपर भी जैनेंद्रजी ने अपने भीतरी चैतन्यको हमेशा लोगों के लिए न्योछावर किया था। अपनी लेखनकी मजबूरी के बारे में बताते हुओ वे अन्योंसे कहते थे ' मुझमें न वक्तव्य हैं, न, संदेह हैं जैसे बोल लेता हूं, वैसे ही लिख जाता हूं।'[१]

---

१ 'डॉ. विजय कुलश्रेष्ठ' - 'जैनेंद्र उपन्यास और कला' - पृ. ५-६
प्रकाशक - पंचशील प्रकाशन, फिल्म कालोनी,
जयपुर-३, संस्करण - १९७८

वे धार्मिक कट्टरताके नहीं बल्कि उदारताके प्रतीक माने जाते थे । वह धीमेसे बोलना प्रारंभ कर देते थे । धीरे-धीरे उसमें ~~ठ~~ रस आ जाता था । और बातचीतमें कभी-कभी शिष्ट और दार्शनिक हो उठते थे । मामा भगवानदीन के पास रहते वक्त गुरुकुल आश्रम में जो संस्कार उनके हृदयपर अंकित रहा उनका प्रभाव उनके साहित्य स्थान पर पाया जाता था । सादगी के साथ अहंवादिता भी उनके व्यक्तित्व में समायी थी ।

जैनेंद्र की जीवनदृष्टि/गहरी छाप उनके कृतियों में थी । वैचारिक धरातलपर ही जैनेंद्र विद्रोही नही रहे बल्कि क्रियात्मक रूप में भी वे विद्रोही रहे थे । युवावस्थामें आतंकवादी दल से उनका संबंध आया था । उन आतंकवादी और रोमांचकारी घटनाओं ने जैनेंद्र के व्यक्तित्व को उभारा और अलंकृत किया था । उनके संकल्प गहन और अनुभूति दृढ थे । उनका सारा जीवन संघर्षमय होने के कारण उनके कृतित्व को मूलमें भी आंतरिक संघर्ष परिलक्षित होता था । अहंकार और प्रेम, स्वार्थ और समर्पण का संघर्ष कृतियों मे विवेचित करते हुए उन्होंने विशिष्ट आस्तिकताको कलात्मक पध्दति से व्यक्त किया था ।

जैनेंद्र का लेखकीय व्यक्तित्व सादगीसे परिपूर्ण, सहज और सामान्य था । उनमें कहीं पर भी आडंबर नही था । उनके व्यक्तित्व के विषय में श्री रघुनाथ-शरण झालानी कहते हैं -- ' तेजस्विता ,प्रखरता तथा तीव्रता, गहनता, दृढता तथा व्यापकता इन छ: दृष्टियोंसे यदि हम अपने आलोच्य उपन्यासकारका विश्लेषण करे तो जैनेंद्र में तेजस्विता, प्रखरता, गहनता और सूक्ष्मता इन चार गुणों की स्थिति असंदिग्ध हैं ..... जैनेंद्र की कला में दृढता और नियतिवाद के संघर्ष में यह बात कुछ अधिक जचती नही हैं ।'[१] प्रेम और अहिंसा की बाते कट्टरतासे मेल नही खा सकती । वे अपने जीवन संघर्ष के साथ संघर्ष करते करते उनकी प्राणज्योत २४ दिसम्बर १९८८ को विलीन हो गयी । ऐसे महान धीर

१ 'डॉ. विजय कुलश्रेष्ठ' - 'जैनेंद्र उपन्यास और कला' - पृ. ७
प्रकाशक - पंचशील प्रकाशन, फिल्म कालोनी, जयपुर-३, संस्करण - १९७८

१९ साहित्यकार को भावपूर्ण श्रध्दांजली ।

हिंदी साहित्य में से एक महान साहित्यकार को हम खो चुके हैं ।